सत्यमेव जयते

उप सभापति, राज्य सभा
संसद भवन, नई दिल्ली
DEPUTY CHAIRMAN,
RAJYA SABHA
PARLIAMENT HOUSE
NEW DELHI

# परिचय

आधुनिक विधान-मंडलों में द्वितीय सदन की भूमिका और प्रासंगिकता एक ऐसा विषय है जिस पर राजनीतिविदों और राजनीतिज्ञों के बीच काफी लंबे समय से गहन वाद-विवाद और विचार-विमर्श हो रहा है। हमारे संविधान के निर्माताओं ने संविधान सभा में अत्यधिक बहस और चर्चा करने के बाद केन्द्र में द्विसदनीय विधान-मंडल के पक्ष में निर्णय दिया था क्योंकि स्वतंत्रता-पूर्व के दिनों में द्विसदनीय केन्द्रीय विधान-मंडल में कार्य करने का हमें अनुभव था और दूसरे, नव-स्वतंत्र राष्ट्र होने के नाते भारत को विकास की चुनौतियों को पूरा करना था तथा समस्याओं की जटिलता का सामना करना था। इसलिए, हमारी राज-व्यवस्था के संघीय स्वरूप को देखते हुए संविधान के निर्माताओं द्वारा राज्य सभा की स्थापना किया जाना युक्तिसंगत कदम लगा क्योंकि उन्होंने इस सदन की परिकल्पना एक ऐसे सदन के रूप में की थी जो प्रभावशाली, समीक्षात्मक तथा विचार-विमर्श किए जाने के योग्य हो सके।

राज्य सभा जल्दबाजी में बनाए गए विधान पर नियंत्रण रखने के अतिरिक्त संघ के घटकों के प्रतिनिधित्व का एक मंच भी है जो साहित्य, विज्ञान, कला और समाज सेवा में विशिष्टता प्राप्त लब्ध-प्रतिष्ठ व्यक्तियों को देश की सेवा करने का अवसर प्रदान करता है। इस प्रकार यह महती सभा महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर उच्च स्तर की बहस करके बुद्धिमत्तापूर्ण परामर्श प्रदान करती है। संसद् में द्वितीय सदन रखने के संबंध में हमारे संस्थापक पूर्ववर्तियों के दृष्टिकोण को संक्षेप में सटीक रूप में प्रस्तुत करते हुए प्रख्यात विधिवेत्ता और संविधान सभा के सदस्य श्री गोपालस्वामी अय्यंगर ने कहा कि, ''...द्वितीय सदन के विद्यमान रहने से हमारी उपलब्धि यह होगी कि हम उसे एक ऐसे साधन के रूप में इस्तेमाल करेंगे जिससे हम जल्दबाजी की किसी कार्यवाही में विलंब कर सकेंगे और हम संभवत: ऐसे सुलझे हुए लोगों को अवसर दे सकेंगे, जो, हो सकता है कि राजनैतिक घमासान में बहुत अधिक उलझे न हों किंतु जो ऐसी विद्वत्ता और महत्त्व के साथ वाद-विवाद में भाग लेने के इच्छुक हों, जिसकी सामान्यत: हम हाउस ऑफ द पीपुल से अपेक्षा नहीं रखते।''

पांच से अधिक दशकों में राज्य सभा ने संसदीय लोकतंत्र के संवर्द्धन में जो भूमिका निभायी है, वह हमारे गणतंत्र के पूर्ववर्ती संस्थापकों की बुद्धिमत्ता को पर्याप्त रूप से सिद्ध कर देती है। इसने समीक्षात्मक सदन, विचार-विमर्श करने वाले निकाय और विधायी साधन के रूप में हमारी लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था में एक रचनात्मक और कारगर भूमिका का निर्वाह किया है। विधायी क्षेत्र में इसका कार्य-निष्पादन अत्यधिक महत्वपूर्ण रहा है और यह जनता के अधिकाधिक लाभ और कल्याण के लिए सरकारी नीतियों को प्रभावित करने में सहायक रहा है। संघीय चैम्बर के रूप में इसने हमारे देश की एकता एवं अखंडता के लिए कार्य किया है, हमारी जनता के जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए अतुलनीय योगदान दिया है और हमारे संसदीय लोकतंत्र में उनकी आस्था को सुदृढ़ किया है। आरंभ से ही राज्य सभा की बेंचों को प्रख्यात एवं लब्ध-प्रतिष्ठ व्यक्तियों ने सुशोभित किया है। राष्ट्रीय महत्त्व के मुद्दों पर अनेक यादगार बहसें हुई हैं जिनमें सदस्यों ने अपना मूल्यवान एवं महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है।

भारत के संविधान में यह उपबंध किया गया है कि भारत के उप-राष्ट्रपति राज्य सभा के **पदेन** सभापति होंगे। वस्तुतः, इस संवैधानिक उपबंध ने सभा की गरिमा एवं प्रतिष्ठा को बढ़ाया है। राज्य सभा के सभापति ने हमारे संसदीय तंत्र में राज्य सभा को महत्त्वपूर्ण स्थान दिलाने में एक उत्कृष्ट भूमिका निभायी है। इस मामले में राज्य सभा बड़ी भाग्यशाली रही है कि आरंभ से ही सभापति के रूप में उसे प्रतिष्ठित एवं विख्यात व्यक्ति मिले हैं। डा॰ एस॰ राधाकृष्णन् जैसे दूरदर्शी, विद्वान, उत्कृष्ट चिंतक और दार्शनिक इस महती सभा के पहले सभापति के रूप में सुशोभित हुए थे। इन सभी ने असाधारण रूप से राज्य सभा के विचार-विमर्शों का मार्ग-दर्शन किया और उच्च परंपराएं स्थापित कीं। हमारे वर्तमान सभापति श्री भैरों सिंह शेखावत का पचास से अधिक वर्षों का सार्वजनिक जीवन का शानदार कैरियर रहा है। उन्हें एक मार्गदर्शक, प्रेरणास्रोत और सक्रिय सभापति के रूप में देखा जाता है। उनके मूल्यवान मार्गदर्शन के अधीन इस महती सभा के मान-सम्मान एवं प्रतिष्ठा में और भी वृद्धि हुई है। उन्होंने संसदीय संस्थाओं को ''लोकतंत्र के मंदिर'' ''हमारे देश का नैतिक आधार'' कहा है ''जिन्हें ऐसे मानदंड स्थापित करने चाहिए जिनका पालन अन्य लोग करें।'' उन्होंने सुविचारित रूप से समुक्ति करते हुए कहा कि, ''लोकतंत्र के कार्यकरण के संबंध में जनता की अवधारणा न केवल कार्यपालिका द्वारा उपलब्ध कराए गए शासन की गुणवत्ता पर अपितु इस बात पर भी आधारित होती है कि सभा की कार्यवाहियां किस तरह से उनके कल्याण के लिए प्रासंगिक हैं।'' सभा की कार्यवाहियों को समृद्ध बनाने और जनता की नजरों में उनका महत्त्व बढ़ाने के लिए माननीय सभापति ने समय-समय पर महत्त्वपूर्ण कदम उठाए हैं।

हमारा यह प्रयास होना चाहिए कि हम समय-समय पर हमारे माननीय सभापतियों द्वारा स्थापित की गई परंपराओं को संरक्षित रखें। हमें सभा की प्रतिष्ठा और मर्यादा का ध्यान रखना चाहिए। सभा की कार्यवाहियों में रचनात्मक तरीके से योगदान करना चाहिए और हमारी संसद् लोकतंत्र, पंथनिरपेक्षता और सभी के लिए सामाजिक-आर्थिक न्याय जैसे जिन आदर्शों के प्रति वचनबद्ध है, उन्हें और आगे बढ़ाने के लिए कड़ी मेहनत करनी चाहिए।

मैं एक दशक से अधिक समय से राज्य सभा से जुड़ा हुआ हूं और पिछले दो वर्षों से मुझे राज्य सभा के उपसभापति के रूप में पीठासीन होने का विशेषाधिकार और सम्मान भी मिला है। मैं सभा के दिन-प्रतिदिन के कार्यकरण का गहराई से अवलोकन करता हूं और मैंने यह देखा है कि सदस्य नीति-निर्माताओं को प्रभावित करने के विचार से जोरदार तरीके से अपनी बात रखते हैं। मुझे राज्य सभा एक जीवंत और दूरदर्शी निकाय लगता है जो महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर शांत एवं स्थिर माहौल में विचार-विमर्श करता है। संख्या की दृष्टि से छोटा सदन होने के कारण राज्य सभा के सदस्यों में सख्यभाव एवं मेल-जोल बना रहता है जो दलगत प्रतिबद्धताओं और राजनीतिक विचारधाराओं की सीमाओं को पार कर जाता है। वस्तुतः यह संसदीय लोकतंत्र के सफल कार्यकरण के लिए एक शुभ संकेत है। कभी-कभी यहां पर शोरगुल मचता है जो हर जीवंत लोकतंत्र में हो ही जाता है। किन्तु, सभा की मर्यादा को बनाए रखा जाता है। वस्तुतः, पीठासीन अधिकारी का कार्य बहुत कठिन और संवेदनशील होता है क्योंकि उसे यह सुनिश्चित करना होता है कि सभा के कार्य-संचालन विषयक नियमों का समुचित रूप से पालन तो किया ही जाए, साथ ही प्रत्येक सदस्य को वाद-विवाद में भाग लेने का अवसर भी प्रदान किया जाए। हालांकि, सदस्यों के समर्थन और सहयोग से आसानी से ऐसी दिक्कतों को काबू किया जा सकता है।

पिछले कुछ वर्षों में राज्य सभा में कई ऐसे पूर्व उदाहरण, परिपाटियां और संव्यवहार विकसित हुए हैं जोकि इसके लिए विशिष्ट हैं। राज्य सभा के कार्यकरण को समुचित परिप्रेक्ष्य में समझने के लिए यह आवश्यक है कि ऐसे संव्यवहारों के साथ-साथ प्रक्रिया के औपचारिक नियमों से परिचित हुआ जाए।

सदस्यों को संसदीय नियमों, पूर्व-उदाहरणों, परंपराओं, परिपाटियों और विनिर्णयों को समझने की जरूरत है ताकि वह सभा के बेशकीमती समय का अधिकतम उपयोग सोद्देश्यपूर्ण बहस करने में लगा सकें। इस महत्त्वपूर्ण कार्य के लिए ''कार्यरत राज्य सभा'' एक अत्यंत उपयोगी प्रकाशन है जोकि सभा के विविध पहलुओं और कार्यकरण के घटकों पर ध्यान केन्द्रित करता है। यह इस तथ्य को सामने लाता है कि राज्य सभा का एक विशिष्ट अस्तित्व है और वह राष्ट्र के मामलों में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। मैं राज्य सभा के महासचिव डा॰ योगेन्द्र नारायण को हार्दिक रूप से शुभकामनाएं देता हूं जिन्होंने 1996 में प्रक्रिया तथा कार्य-संचालन विषयक नियमों संबंधी इस पुस्तक के पहले संस्करण के बाद घटनाक्रम में आए अद्यतन परिवर्तनों को पुस्तक में शामिल करने के लिए महत्त्वपूर्ण पहल की है। मैं इस महत्त्वपूर्ण परियोजना से जुड़े सभी व्यक्तियों को बधाई देता हूं। मैं आशा करता हूं कि इस पुस्तक का संशोधित संस्करण संसदीय साहित्य के व्यापक संग्रह में एक बेशकीमती योगदान होगा और यह सदस्यों एवं हमारे संसदीय लोकतंत्र के कार्यकरण में दिलचस्पी रखने वाले व्यक्तियों के लिए एक पर्याप्त जानकारी प्रदान करने वाली एक संदर्भ-दर्शिका साबित होगी।

**के॰ रहमान खान**